ORIGINAL RESEARCH PAPER

Hindi

KEY WORDS:

यथार्थ का अवचेतन और व्यंग्य

डॉ. सरिता सहायक, प्राध्यापक श्याम लाल कॉलेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय

अभिव्यक्ति का यदि वैश्विक परिदृश्य में आकलन किया जाये तो इसका रूप वैविध्य मिलता है। कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, निबन्ध, व्यंग्य आदि। अभिव्यक्ति की कला अपने आप में असाधारण होती है और यदि यह व्यंग्य हो तो असाधारण का कलात्मक होना लाजमी हो जाता है। समाज में होने वाली घटनाओं के प्रति हर लेखक संवेदनशील होता है और सभी उस एक घटना को अलग–अलग और प्रभावपूर्ण तरीके से प्रस्तुति देते हैं। व्यंग्य में भी इसी तरह का आग्रह होता है। इसमें मनुश्य के अवचेतन की भूमिका अहम होती है। उसके लिए सबसे ज्यादा आवश्यक होता है मन के अन्दर उठने वाले उद्वेलन को किस तरह व्याख्यायित करके पुनः प्रस्तुत किया जाये। व्यंग्य के निर्माण में यहीं रस्साकस्सी होती है। डॉ. हरदयाल ने इस बारे में लिखा है कि 'मन के उद्वेलन को कहीं किसी न किसी प्रकार अभिव्यक्त तो होना ही है। इसी आवश्यकता के कारण निंदा के एक सुसंस्कृत रूप की खोज हुई, जिसे व्यंग्य कहा गया।' व्यंग्य सम्प्रेशण की सम्पूर्णता के साथ भी जुड़ा है, सामाजिक घटना की प्रकृति और उसका अवबोध दोनों ही व्यंग्यकार और पाठक के बीच में निर्वैयक्तिकरण के सिद्धान्त की स्थापना करते हैं। व्यंग्य की सफलता अभिव्यक्ति के रूपों पर टिकी होती है। उसी से पाठक व्यंग्यकार के प्रति अपने मन में धारणा बनाता है। यदि व्यंग्य में नैतिकता और सामाजिक उद्देश्य निहित होगा तभी वह पाठक के सामने तटस्थ रह पायेगा।

व्यंग्य विश्व की सभी भाशाओं में देखने को मिलता है। जहाँ तक हिन्दी साहित्य का सम्बन्ध है इसकी मूल रूप से शुरूआत भारतेन्दु युग में दिखाई देती है। हालांकि व्यंग्य समाज में तब भी था जब साहित्य की शुरूआत नहीं हुई थी, समाज में यह मौखिक रूप में सदैव विद्यमान रहा है, प्रहसन की अभिव्यक्ति का आग्रह समाज में हमेशा ही रहा है। अंग्रेजी साम्राज्य का विस्तार, आयातित संस्कृति और समाज में फैली रूढ़ियाँ और अंन्धविश्वास–इन सभी ने व्यंग्य की आधारभूमि का निर्माण किया। इस कालखण्ड को नस्तर की तरह प्रस्तुत करने में भारतेन्दु के अलावा प्रेमघन और प्रतापनारायण मिश्र ने अहम भूमिका निभाई। इन सभी ने लोकप्रचलित शैलियों के माध्यम से व्यंग्य को अनेक रंगों से भर दिया। इससे इस अवधारणा को भी पुश्टि मिलती है कि व्यंग्य समाज में प्रचलित एक पुरानी विधा है। भारतेन्दु अपनी व्यंग्याभिव्यक्ति के पुराने रूपों में चुटकी लेते हुए दिखाई देते हैं। पैरोडी, स्यापा और गाली भारतेन्दु की मुख्य शैलियां रही हैं।

व्यंग्य का सम्बन्ध व्यंजनात्मक शैली से होता है। अप्रत्यक्ष और अन्य माध्यम इसकी मुख्य पहचान हैं–

मुंह जब लागे तब नहीं छुटे, जाति मान धन सब कुछ लूटे।
पागल करि मोहि करे खराब, क्यों सखि सज्जन नहीं सराब।

प्रस्तुत पंक्तियों में प्रचलित शैली में अपेक्षित अभिव्यक्ति है, इसी के साथ व्यंग्यकार और पाठक के सामाजिक अवबोध की एकरूपता है। भारतेन्दु को अवचेतन की संस्कृति की गहरी समझ होने के साथ–साथ उसको व्यक्त करने की कला में पारंगत थे। यहीं तक नहीं इसके लिए वो लक्षित समूह का भी चयन करते थे। व्यंग्य की ठेठ और असरकारक शैली को वो ज्यादा पसंद करते थे। 'स्यापा' और 'गाली' शैली का भारतेन्दु सांस्कृतिकरण कर देते हैं जिससे ये शैलियां साहित्यिक रूप ले लेती हैं। हास्य रस इन शैलियों का लक्ष्य होता है। डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार–'व्यंग्य में विशेश दृश्टि से हास्य उत्पन्न होता है। आक्रमण कर उससे हास्य उत्पन्न कराना ही व्यंग्य है।' 'बनारस अखबार' में छपे 'उर्दू मारी गयी' शीर्शक पर वो लिखते हैं–'है–है उर्दू हाय–हाय, कहां सिधारी हाय–हाय'। इस तरह के व्यंग्य का स्थायी भाव हमारे अवचेतन में हमेशा बना रहता है। अपनी बात को कहकर मुकर जाने के आधार पर वो 'नये जमाने की मुकरी' की रचना करते हैं। दरअसल, ये उस समय अभिव्यक्ति के नये माध्यम थे और समाज को इनकी जरूरत भी थी। यही माध्यम बाद में विदेशी सत्ता से लड़ने का हथियार भी बने।

प्रतापनरायण मिश्र और प्रेमघन ने इस काल में इस विधा को और अधिक ऊर्जा से भर दिया। व्यंग्य में विनोदपूर्ण प्रवृति का जो आरम्भ भारतेन्दु के यहाँ दिखाई देता है उसकी गति प्रतापनारायाण मिश्र के 'तृप्यान्ताम्', 'हरगंगा', 'बुढ़ापा' और 'ककाराश्टक' आदि हास्य व्यंग्यात्मक कविताओं में देखी जा सकती है। भारतीय और पाश्चात्य रीतियों का अन्धानुकरण और मानव मन के अन्तर्द्वन्द्व को हल्के–फुल्के अन्दाज में प्रस्तुति दी है। अंग्रेजी शिक्षित युवा पीढ़ी द्वारा भारतीय संस्कृति का त्याग और विदेशी संस्कृति के प्रति आग्रह मिश्र जी को कचोटता है–

जग जानैं इंगलिश हमैं वाणी वस्त्रहि जोय।
मिटै बदन कर श्याम रंग जन्म सुफल तब होय।

अनुचित और अभद्रता भारतीय परिवेश में स्वीकार्य नहीं है। उनके द्वारा किया गया तीखा प्रहार मात्र शाब्दिक नहीं है वे इसके माध्यम से भारतीय जन के अवचेतन को कुरेदना चाहते हैं। व्यंग्य की इस प्रकृति के सम्बन्ध में श्रीकान्त चौधरी ने कहा है कि 'व्यंग्य समाज के विभिन्न आंतरिक और बाह्य दोशों के प्रति चलने वाली सतत् क्रान्ति है। 'प्रेमघन–सर्वस्व' के माध्यम से प्रेमघन ने अधिकतर समसामयिक विशयों के प्रति व्यंग्य विधा को आगे बढ़ाने का कार्य किया है। इस विधा की दृश्टि से यह काल अनेक मानसिक दबावों का काल था फिर भी इसका प्रारम्भिक रूप भारतेन्दु की निडरता के कारण इतना उजला दिखाई देता है।

व्यंग्य मात्र विनोदपूर्ण या तीखा प्रहार करने की कला नहीं है यह दायित्व भरा भी है। कहने का तात्पर्य यह है कि इस कला के माध्यम से सामाजिक सुधार की अपेक्षा भी की जाती है। कला का दायित्व जन उद्देश्यों से युक्त होता है। प्रख्यात आलोचक इन्द्रनाथ मदान ने कहा है कि 'परिवेश के लिए असन्तोश व्यंग्य का रूप धारण करता है। इसे खरी–खरी सुनाना भी कहा गया है।' अभिव्यक्ति का यह माध्यम आज भी उतनी तन्मयता से लिखा और सुना जाता है। जीवन में व्याप्त अनेक कुरीतियाँ और सत्ताजनित पाखण्ड, अन्याय, असामंजस्य ही व्यंग्यकार के मन असन्तोश पैदा करता है। असन्तोश की यह संवेदना मात्र कवि की नहीं है बल्कि पूरे राश्ट्र की है।

हिन्दी साहित्य में द्विवेदी युग की पहचान व्याकरणसम्मत विशुद्धता के कारण भी है, बावजूद इसके हास्य व्यंग्य की परम्परा मौजूद रही। महावीर प्रसाद द्विवेदी, बालमुकुन्द गुप्त, नाथूराम शर्मा 'शंकर', ईश्वरीप्रसाद शर्मा, जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी और यहाँ तक कि मैथिलीशरण गुप्त की रचनाओं में हास्य व्यंग्य दिखाई देता है। पलायनवाद, और औपचारिकता भरा जीवन कितना हास्यास्पद बन जाता है यह द्विवेदी जी के 'सरगो नरक ठेकाना नाहि' नामक व्यंग्य रचना में कल्लू अल्हैत के माध्यम से दिखाया गया है। फैशनपरस्ती, व्यभिचार, राजनैतिक शोशण जैसी अनेक कुरीतियाँ इनकी रचनाओं का विशय रही। शहर में रहने पर ग्रामीण का जीवन सहज नहीं रह पाता है। रहन–सहन, परिधान और सम्प्रेशण में बदलाव उसके लिए आवश्यक हो जाता है परन्तु यह सब व्यवहार से मेल नहीं खाता है। आदमी के मन में इच्छा–अनिच्छा का अन्तर्द्वन्द्व हमेशा चलता रहता है। कवि का मानना है कि सहजता के अनुसार ही आदमी को विचार और वस्त्र धारण करने चाहिए। इस हास को द्विवेद्वि जी ने बड़े ही मनोविश्लेशणात्मक तरीके से व्यक्त किया है–

अचकुन पहिरि बूट हम डाटा बाबू बनेन डेरात–डेरात।
लागेन आवै जाय सभन मां कण्टु फूट तब बना बतात।।
जब तक हमरे तन मां तनिकौ रहा गाउं के रस का अंसु।
तब तक हम अखबार किताबै लिखि–लिखि कीन उजागर बंसु।।

बालमुकुन्द गुप्त इस काल के प्रख्यात व्यंग्यकार हुए हैं। 'शिवशम्भु का चिट्ठा', 'कर्जनाना' में समसामयिक प्रतिबद्धता और सजगता का परिचय दिखाई देता है। उस समय के वायसराय लार्ड कर्जन गुप्त जी के निशाने पर हमेशा रहते थे। विदेशी सत्ता के आदेशों से भारतीय जनता कितनी त्रस्त थी इसका उल्लेख इनकी रचनाओं के अलावा और कहीं दिखाई नहीं देता है। वायसराय की हर बात के पीछे छिपे उद्देश्य को बालमुकुन्द गुप्त बड़े ही कलात्मक तरीके से प्रस्तुति देते हैं। एक बार लार्ड कर्जन ने भारत की जनता को झूठा कह कर सम्बोधित किया तो कवि अपनी रचना में उन पर तीखा प्रहार करते हैं–

हमसे सच की सुनो कहानी, जिससे मरे झूठ की नानी।
सच है सभ्य देश की चीज, तुमको उसकी कहाँ तमीज ?
औरों को झूठा बतलाना, अपने सच की ढींग उड़ाना।
ये ही पक्का सच्चापन है, सच कहना तो कच्चापन है।।

प्रस्तुत रचना में सहज भाशा के प्रयोग के साथ कार्य– कारण की पूर्ण अभिव्यक्ति है। गुप्त जी यहीं तक सीमित नहीं रहते हैं 'कर्जनाना' में वे कर्जन को उसके व्यवहार के कारण 'अपने मुंह मियां मिट्ठू' कह कर उसे हास्य का पात्र बना डाला। बालमुकुन्द गुप्त जी का मनोविज्ञान हमेशा ही उच्चे स्तर का रहा इस कारण से समाज और विचार के विश्लेशण को भी अभिव्यक्ति का रूप दे देते हैं। 'आजकल का सुख' में वे सुखी जीवन के तमाम उपकरण और उनके आग्रही के मन में पूरी गहराई के साथ उतर जाते हैं। स्वार्थी, खुशामदी और विलासी लोगों के लिए सुख अन्य समाज के लिए कितना दुःख होता है। नाथूराम शर्मा 'शंकर' का 'गर्भरण्डा रहस्य'– उस समय शायद इसका तात्कालिक महत्व रहा होगा परन्तु हर युग में इसकी प्रासंगिकता सदैव बनी रहेगी। गर्भ में ही विधवा हो जाने वाली बालिका के माध्यम से कवि ने संवेदना के हर मर्म को झकझोर कर रख दिया है। शायद नाथूराम शर्मा द्विवेदी युग के अकेले

ऐसे व्यंग्यकार थे जिनकी संवेदना का विस्तार व्यापक था। वे उन सामाजिक अपराधों को अपना विशय बनाते थे जिन्हें समाज में सामान्य तौर पर निरन्तरता के साथ वहन किया जाता था। इनका व्यंग्य असरकारक था और ये जनमानस की उस नस को सबसे पहले दबाते थे जिसमें सबसे ज्यादा दर्द हो सकता था। इसीलिए वो भगवान कृश्ण को जो सभी की आस्था का प्रतीक हैं पाश्चात्य वेशभूशा में दिखाने का साहस करते हैं।

द्विवेदी युग के बाद यह विधा निरन्तर अग्रसर होती हुई दिखाई देती है। 'मतवाला', 'गोलमाल', 'भूत', 'मौजी', 'मनोरंजन', 'चना चबेना' आदि इस काल की सबसे चर्चित रचनाएँ थी। यहाँ पर व्यंग्य में वैविध्य उत्पन्न हुआ और पाठक वर्ग की रूचियों में बदलाव कराने में भी यह विधा सफल रही। पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', बेढब बनारसी, और हरिऔध आदि ने अपनी व्यंग्य रचनाओं के माध्यम से उन तमाम विशयों का स्पर्श किया जो हर रोज की जिन्दगी से झुड़े हुए थे। इस समय तक भाशा भी नये तेवर को अपना चुकी थी और कविजन भी हिन्दी और उर्दू का भरपूर प्रयोग करने लगे जो ठेठ अन्दाज में अपनी बात को विनोदपूर्ण हास्य को सहजता से ब्यान करती है। बेढब बनारसी अक्सर अभिव्यक्ति में साहित्यिक भाशा से अलगाव बनाकर रखते हैं उनका मानना है कि भावों का विश्लेशण नहीं उनकी सहज प्रस्तुति आवश्यक होती है–

बाद मरने के मेरे कब्र पर आलू बोना
हश्र तक यह मेरे ब्रेकफास्ट के सामां होंगे,
उम्र सारी तो काटी घिसते कलम ए बेढब
आखिरी वक्त में क्या खाक पहलवां होंगे।

व्यंग्यकार हरिऔध ने 'चोखे चौपदे' और 'चुभते–चौपदे' में विशय की संक्षिप्तता को बढ़ावा देते हैं ये सम्पूर्ण बात को दो या चार पंक्तियों में पूरे कथानक को जीवन्त कर देते हैं।

आधुनिक काल में देखा गया है कि व्यंग्य को मानवीय करूणा के साथ अधिक जोड़कर प्रस्तुति दी गई है। निराला की 'कुकुरमुत्ता' प्रभावशाली व्यंग्य रचना रचना है। अज्ञेय की 'सांप' और भवानीप्रसाद मिश्र की 'गीतफरोश' हिन्दी साहित्य की सबसे बेहतरीन कालजयी व्यंग्य रचनायें है–

जी हाँ हुजूर मै गीत बेचता हूँ,
तरह–तरह के किसिम–किसिम के गीत बेचता हूँ।

यह गीतों की बढ़ती हुई व्यवसायिकता पर करारा व्यंग्य है। लेखन की यह प्रवृति साहित्य के लिए खतरनाक है। हरिशंकर परसाई ने व्यंग्य की कला में व्यापक बदलाव किया। इसके लिए वो जनमानस को ही केन्द्र में रखकर विसंगतियों पर चोट करते हुए करारा व्यंग्य किया है। निश्कर्श रूप से कहा जा सकता है कि व्यंग्य के लिए कोई सिद्धान्त नहीं है यह मनुश्य के अवचेतन के अवबोध पर अधिक निर्भर करता है। मन में समाज की अनुभूतियाँ सदैव रहती हैं परन्तु उनकी प्रतिबद्ध अभिव्यक्ति ही उद्देश्य को नई ऊँचाई प्रदान करती है। व्यापक विविधताओं भरी हुई इस विधा को रचने वाला निश्चित रूप से अधिक जाग्रत और प्राणवंत रहता है तभी इतनी असाधारण रचना को रचने वह कामयाब हो पाता है।